**ओ३म्**

**-सत्य धर्म की गवेषणा व अनुसंधान मनुष्य का कर्तव्य-**

**‘वेद, मतमतान्तर, कर्मफल और पुनर्जन्म’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 संसार में मनुष्यों की संख्या लगभग 7 अरब है जिसमें सभी स्त्री व पुरूष सम्मिलित हैं। इन सभी लोगों के अपने अपने मत-मतान्तर, जीवन शैलियां-पद्धतियां, धार्मिक आस्थायें व पूजा पद्धतियां हैं। वर्तमान में अपवादों को छोड़कर प्रायः शिक्षित व अशिक्षित सभी व अधिकांश लोग धन व सुख सुविधाओं के साधन बटोरने के पीछे रात दिन लगे हुए हैं। ऐसा करते हुए धर्म-अधर्म व उचित-अनुचित का ध्यान नहीं रखा जाता। ऐसे लोग कभी यह विचार नहीं करते कि **वह वस्तुतः क्या हैं, कौन हैं, उनके जीवन का उद्देश्य क्या है, किसने व क्यों उनको यह मनुष्य जन्म दिया है, उनकी मृत्यु कब व किस कारण से होगी, मृत्यु के बाद उनकी सत्ता अर्थात् जीवात्मा संसार में विद्यमान रहेगी या नष्ट हो जायेगी, क्या उनका पुनर्जन्म होगा, यदि होगा तो उसका क्या कारण व आधार होगा, पुनर्जन्म में उनके इस जन्म के कर्मों की क्या भूमिका होगी और यदि होगी तो क्या उन्होंने इस जन्म में जो कर्म किये हैं उससे उनके सर्वोत्तम जन्म होने की गारण्टी है? आदि। प्रायः सभी लोग यह भी जानने का प्रयास नहीं करते कि यह संसार किसने व क्यों बनाया, वह है या नहीं और यदि है तो कैसा है और यदि नहीं है क्यों नहीं है? उस सृष्टि बनाने व हमें जन्म देने वाली अदृश्य सत्ता का हमसे क्या सम्बन्ध है। क्या हमारे सभी अच्छे व बुरे कर्म उस सृष्टिकर्त्ता की दृष्टि में हैं व क्या वह हमारे कर्मों को सुफल व दण्ड हमें देगा? क्या हमारे पाप माफ हो सकते हैं? क्या यह मान्यता कोरा अज्ञान व स्वार्थ से प्रेरित है या इसमें कुछ तथ्य भी है?** यह सभी महत्वपूर्ण प्रश्न हैं जिन पर प्रत्येक व्यक्ति को अपने खुले मस्तिष्क व बुद्धि से विचार करना चाहिये और अपने जीवन की भावी रूप रेखा निष्पक्ष भाव से तय करनी चाहिये। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो हो सकता है कि इससे हमारी अपूर्णनीय हानि हो जाये और हमें भविष्य में वा जन्म-जन्मान्तरों तक पछताना पड़े।

**मनमोहन कुमार आर्य**

 इन सभी प्रश्नों के उत्तर यदि हम मत-मतान्तरों में सृष्टिकर्त्ता ढूढेंगे तो हमारा अनुमान, ज्ञान व अनुभव है कि यह वहां नहीं मिलेंगे। हमारा समय बर्बाद हो सकता है। वेदों की शरण में जाकर अथवा महर्षि दयानन्द का वैदिक साहित्य सत्यार्थप्रकाश व ऋग्वेदादिभाष्यभूमिक व अन्य ग्रन्थों वेद, दर्शन, उपनिषद व मनुस्मृति आदि का अध्ययन कर हम इन सभी प्रश्नों के सत्य व यथार्थ उत्तर पा सकते हैं। उत्तर ही नहीं अपितु हमें जीवन के उद्देश्य व उसको प्राप्त व सफल सिद्ध करने के उपायों का भी यथार्थ ज्ञान होता है। अतः संसार के सभी मनुष्यों को निष्पक्ष होकर स्वामी दयानन्द के वैदिक साहित्य का अध्ययन कर लाभान्वित होना चाहिये। इससे मनुष्य, समाज, देश व विश्व का सही मायनों में कल्याण होगा, ऐसा हम अनुभव करते हैं। वेद इन प्रश्नों का क्या उत्तर देते हैं, उन्हें बताने से पूर्व वेद हैं क्या इस पर संक्षेप में जान लेते हैं। वेद सृष्टि के आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न संसार के सभी लोगों के चार पूर्वज ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को ईश्वर द्वारा दिया गया इस सृष्टि से सम्बन्धित व मानवीय कर्तव्यों का सत्य व यथार्थ ज्ञान है। वेदों से प्राचीन ज्ञान व पुस्तकें संसार में अन्य कोई नहीं हैं, यह सर्वसम्मत सिद्धान्त है। **वेदों से यह ज्ञात होता है संसार में तीन मूल, नित्य, अनादि, अजन्मा, अमर सत्तायें व पदार्थ हैं। यह क्रमशः ईश्वर, जीव व प्रकृति हैं। ईश्वर व जीवात्मा चेतन पदार्थ हैं तथा प्रकृति जड़ पदार्थ है। ईश्वर सच्चिदानन्द, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, धार्मिक व सृष्टिकर्त्ता** **है। यह जीवात्मा के भीतर सर्वव्यापक व सर्वान्तर्रयामी स्वरूप से हर क्षण विद्यमान है और हमेशा जागता रहता है। जीवात्मा एक चेतन तत्व, एकदेशी, बिन्दूवत्, आकाररहित, ज्ञान व कर्म के स्वभाववाला, अल्पज्ञ, ससीम, कर्मों का कर्त्ता** **व ईश्वरीय व्यवस्था से उन कर्मों के सुख-दुःख रूपी फलों का भोक्ता, फल भोग के लिए जन्म-मरण में फंसा हुआ, ईश्वरोपासना, यज्ञ, सेवा, परोपकार, देशभक्ति आदि वेदविहित सत्कर्मों को करके मुक्ति को प्राप्त होने की क्षमता वाला है। प्रकृति सत्, रज व तम गुणों वाली कारण अवस्था में अति सूक्ष्म कणों वाली होती है। इस प्रकृति को ही इस सृष्टि का निमित्तकारण परमात्मा जीवों के अनुकूल अपने नित्य ज्ञान व सामर्थ्य से सृष्टि रचना कर इसे इच्छित स्थूलाकार कर इस ब्रह्माण्ड की रचना करते हैं।** सृष्टि बनाने का कारण ईश्वर की सामर्थ्य (Ability to perform) की सफलता सहित जीवों को उनके पूर्वजन्मों व युग-युगान्तर-कल्पों के अवशिष्ट पाप-पुण्य कर्मों के सुख-दुःख रूपी फलों व भोगों को प्रदान करना है।

 वैदिक सत्य शास्त्रानुसार मनुष्य जन्म उन जीवात्माओं को प्राप्त होता है जिन्होंने पूर्व जन्म में आधे से अधिक शुभ कर्म किये हों। जितने अधिक शुभ कर्म होंगे उतना अधिक अच्छा मानव जन्म जीवात्मा का होगा। अच्छे जन्म से तात्पर्य है कि सर्वाधिक अच्छे शुभकर्मों व प्रारब्ध वाले जीवात्माओं को अच्छे धार्मिक माता-पिता, आचार्य, सगे सम्बन्धी, धन-सम्पत्ति प्राप्त होते हैं और जिनके शुभ कर्म न्यून परन्तु आधे से अधिक अच्छे होते हैं उन्हें अपने से अधिक शुभ कर्म वाली जीवात्माओं से निम्नतर मनुष्य योनि प्राप्त होती है। मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में जन्म का आधार कर्मों को मानकर जो विधान व व्यवस्था दी गई है वह तर्कसंगत होने व वेदों से अविरूद्ध होने से माननीय है। यह कोई अज्ञान व अन्धविश्वास से युक्त मान्यता, सिद्धान्त व परम्परा नहीं है। इससे अधिक समाधानकारक तर्कपूर्ण उत्तर किसी मत-मजहब के पास नहीं है। हमने मनुष्य के बारे में वह क्या है, कौन है और उसका उद्देश्य क्या है? प्रश्नों को उपस्थित किया था। वेदों के आधार पर इनका समाधान है कि मनुष्य यद्यपि ईश्वर द्वारा निर्मित शरीर व जीवात्मा का संघठन है परन्तु इसमें चेतन तत्व जीवात्मा ही मनुष्य है और यह अन्नमय शरीर सृष्टि के पंचभूतों से मिलकर बना है जो मृत्यु होने पर अग्नि में अन्त्येष्टि कर दिये जाने पर नष्ट होकर अपने मूल पंच तत्वों में मिल जाते हैं। जीवात्मा ही वस्तुतः वह मनुष्य है जिसका उल्लेख हमने जीवात्मा का स्वरूप वर्णन करते हुए किंचित विस्तार से पहले कर दिया है। हम कौन हैं? का उत्तर भी मनुष्य एक चेतन तत्व जीवात्मा ही है। मनुष्य के जन्म का उद्देश्य सदकर्मों को करके जन्म व मृत्यु के बन्धनों से छूट कर दुःखों की निवृत्ति व ईश्वर के सान्निध्य में रहकर सुख व आनन्द की प्राप्ति है। यह अवस्था मुक्ति व मोक्ष प्राप्त करने पर प्राप्त होती है। विवेकी पुरूषों को मुक्तावस्था प्राप्त करने के लिए वैदिक कर्मों यथा वेदों का स्वाध्याय वा अध्ययन, ईश्वरोपासना, यज्ञ-अग्निहोत्र, पितृयज्ञ करते हुए माता-पिता-आचार्यों व अतिथियों की सेवा-सत्कार, बलिवैश्वदेव यज्ञ, अंहिसा का पालन, परोपकार, निर्बलों की रक्षा व सेवा आदि कार्यों को करना चाहिये। मुक्ति एक वा अनेक जन्मों में प्राप्त होती है जिसका निर्णायक ईश्वर है। मनुष्य को तो बस वेदानुसार अधिकाधिक सत्कर्मों को करना व स्वयं के जीवन को शुद्ध व पवित्र बनाना ही होता है।

 अन्य प्रश्न है कि किसने व क्यों उनको यह मनुष्य जन्म दिया है, जन्मधारी मनुष्य व अन्य प्राणियों की मृत्यु कब व किस कारण से होगी, मृत्यु के बाद उनकी सत्ता अर्थात् जीवात्मा संसार में विद्यमान रहेगी या नष्ट हो जायेगी, क्या उनका पुनर्जन्म होगा, यदि होगा तो उसका क्या कारण व आधार होगा, पुनर्जन्म में उनके इस जन्म के कर्मों की क्या भूमिका होगी और यदि होगी तो क्या उन्होंने इस जन्म में जो कर्म किये हैं उससे उनके सर्वोत्तम जन्म होने की गारण्टी है? इनके उत्तर हैं कि ईश्वर ने हमारे पूर्व जन्म में मृत्यु के पश्चात न्यायकारी यमराज होने के कारण हमें हमारे कर्मानुसार यह मनुष्य जन्म दिया है। हमारी मृत्यु वृद्धावस्था में होनी है परन्तु किसी रोग या दुर्घटना के कारण पहले भी हो सकती है। अपनी मृत्यु के विषय में मनुष्य किसी भी प्रकार से जान नहीं सकता। मृत्यु का समय वा काल अनिश्चित है, यह अगले पल वा क्षण में भी हो सकती है अथवा अनेक वर्षों बाद भी। अतः इसकी अवधि अनिश्चित होने के कारण हमें आज से ही मुक्ति के लिए अथवा भावी श्रेष्ठ जन्म वा पुनर्जन्म के लिए प्रयास आरम्भ कर देने चाहियें, इसी में हमारी भलाई है। मृत्यु के बाद हमारी सत्ता नष्ट कदापि नहीं होगी क्योंकि संसार में नाश या अभाव किसी भी पदार्थ व सत्ता का नहीं होता है। वैसे भी जीवात्मा अनादि, अजन्मा, अमर व नित्य है। इसका पुनर्जन्म अवश्यम्भावी है। ऐसा नहीं हो सकता कि पुनर्जन्म न हो, यदि ऐसा होगा तो ईश्वर की व्यवस्था भंग हो जायेगी, जिसकी लेश मात्र भी सम्भावना नहीं है। पुनर्जन्म का कारण हमारे इस जन्म के अभुक्त कर्मों जिनका भोग होना है व पूर्व जन्मों के अवशिष्ट कर्म होंगे। यह सब मिल कर हमारा प्रारब्ध बनेगा और इसी के आधार पर हमारा अगला जन्म होगा। हमारा पुनर्जन्म हमारे कर्म-संचय, प्रारब्ध व कर्मानुसार मनुष्य, पशु, पक्षी, जलचर आदि किसी भी योनि में हो सकता है। हां यह गारण्टी है कि यदि हमारे कर्म सर्वोत्तम होंगे तो हमें सर्वोत्तम योनि व परिस्थितियां मिलेंगी अथवा कर्मानुसार तो मिलनी निश्चित है।

 लेख के आरम्भ में प्रस्तुत शेष प्रश्नों का उत्तर भी दे देते हैं। ईश्वर की सत्ता है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उसकी कृति वा रचना यह ब्रह्माण्ड और सारा प्राणीजगत् है। उसी ने इसे बनाया है और वही इसे चला रहा है। यदि वह न होता तो फिर संसार व प्राणी जगत का अस्तित्व ही न होता। उस ईश्वर का हमसे माता-पिता-गुरू-आचार्य-राजा-न्यायाधीश आदि सहित व्याप्य-व्यापक का सम्बन्ध है अर्थात् वह हमारी आत्मा के भीतर भी व्यापक व विद्यमान है। ईश्वर के हमारी आत्मा के भीतर विद्यमान होने से वह हमारे प्रत्येक कर्म भले ही हमने उन्हें रात्रि के अन्धकार में किया हो, को जानता है व उनका साक्षी है। वह किसी बात व कर्म को भूलता नहीं है। उसे सब कुछ सदैव स्मरण रहता है। इसलिए जन्म-जन्मान्तरों के बाद भी वह हमारे कर्मों का फल व दण्ड देने में समर्थ व सक्षम है। **‘अवश्यमेव हि भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्’** यह कर्म फल व्यवस्था का आदर्श वाक्य है। कर्म करते समय प्रत्येक प्राणी को इसे स्मरण रखना चाहिये। हम जो पाप करते हैं उसे संसार में कोई माफ नहीं करा सकता। किसी पर आस्था ले आयें, जप व तप कर लें, परन्तु किये हुए कर्मों को तो ब्याज व सूद के साथ भोगना ही पड़ेगा। पाप माफ हो सकते हैं या कोई करा सकता है, यह स्वयं में एक कल्पना है जिसका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि पाप माफ होने लगेंगे तो सभी पाप करेंगे। **पाप का फल दुख है और दुःख का कारण पाप है। यदि किसी के पाप माफ हुए होते, तो फिर उसे कोई दुःख न होता। ऐसा एक भी उदाहरण इतिहास में न होने के कारण यह विचार और मान्यता असत्य एवं कोरी कल्पना ही है।** विवेकी जन इस पर कदापि विश्वास नहीं कर सकते। ईश्वर कभी किसी के पापों को क्षमा नहीं करता, यही तर्कसंगत भी है और वैदिक सिद्धान्त भी यही है।

 अब कुछ मत-मतान्तरों के बारे में भी चर्चा कर लेते हैं। संसार में प्रचलित सभी मत-मतान्तरों का आविर्भाव विगत 3000 वर्षों में हुआ है। हम जानते हैं कि बीता हुआ यह काल अज्ञान, अन्धविश्वासों व कुरीतियों तथा बौद्धिक ज्ञान की दृष्टि से अवनति का काल था। अतः इस अज्ञान व अवनति के काल का प्रभाव मत-मतान्तरों में ईश्वर, जीव व प्रकृति के स्वरूप व विभिन्न उपासना पद्धतियों व जीवन शैलियों के अध्ययन से बुद्धिमान व विवेकी सज्जनों को हो जाता है। **अज्ञान मिश्रित कोई भी कार्य लक्ष्य की प्राप्ति नहीं करा सकता।** इन मतों में सबसे बड़ी कमी यह है कि यह प्रायः कर्माशय, प्रारब्ध, कर्मफल व पुनर्जन्म के यथार्थ स्वरूप से पूरी तरह से अनभिज्ञ हैं। इसी कारण इनका ईश्वर व जीव विषयक ज्ञान भी आधा-अधूरा व संशोधनीय व परिमार्जनीय कोटि का है। आधुनिक विज्ञान इस बात का उदाहरण प्रस्तुत करता है जहां खोजों पर खोजें (Research) की जाती हैं जिससे पूर्व की खोजों में रह गई कमियां व त्रुटियां दूर की जा सकें। धर्म में भी इसी प्रकार से ईश्वर, जीव, प्रकृति, श्रेष्ठ जीवन शैली, श्रेष्ठतम उपासना पद्धति व लाभ-हितकारी परम्पराओं का सतत अनुसंधान, खोज, अध्ययन, विवेचन किये जाने की आवश्यकता है। ईश्वर ने वेदों के माध्यम से व महर्षि दयानन्द सहित सभी ऋषियों ने पहले ही संसार के सभी मनुष्यों को इनके समाधान दिये हुए हैं। केवल अपने विवेक से यह जानना है कि क्या वैदिक धर्म की मान्यतायें व सिद्धान्त पूरी तरह सत्य, यथार्थ व उपयोगी हैं या नहीं। इसके लिए हम संसार के सभी मतों के विद्वानों का आह्वान करते हैं कि वेदों व वैदिक विधानों की परीक्षा, अनुसंधान व विवेचना कर सत्य को स्वीकार तथा असत्य को अस्वीकार करें। इसी में समस्त मानवजाति की भलाई व कल्याण हैं। यह कार्य अब नहीं तो भविष्य में देर वा सबेर होना ही है। आने वाली पीढ़ियां किन्हीं लोगों के अज्ञान व स्वार्थों के लिए अपने हित का बलिदान कदापि नहीं करना चाहेंगीं। विज्ञानियों की तरह आने वाले समय में सच्चे धर्म जिज्ञासु, पिपासु व निष्पक्ष विद्वान अवश्य उत्पन्न होंगे जो धर्म के क्षेत्र में अनुसंधान व वैज्ञानिक रीति से परीक्षा कर सत्य धर्म का स्वरूप प्राप्त करेंगे और सारा संसार उस सत्य धर्म का अनुयायी बनेगा। हमें अपने ज्ञान, अध्ययन व अनुभव से लगता है कि वह धर्म व मत वैदिक रीति से ईश्वरोपासना व पंचमहायज्ञ युक्त **“वैदिक धर्म”** ही होगा जिसका पुरूत्थान महर्षि दयानन्द ने उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में किया था। आईये, हम आज ही धर्म के क्षेत्र में सत्य का अनुसंधान आरम्भ कर दें और बहुमूल्य समय नष्ट न करें। **‘काल करे सो आज कर, आज करे सो अब, पल में प्रलय होएगी, बहुरि करोगे कब?’** इसी के साथ लेख को विराम देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**